EDUZONE: International Peer Reviewed/Refereed Multidisciplinary Journal (EIPRMJ), ISSN: 2319-5045
Volume 12, Issue 1, January-June, 2023, Available online at: www.eduzonejournal.com

विन्ध्य क्षेत्र की मध्यपाषाणिक संस्कृति में आजीविका

धीरज कुमार दुबे

शोध छात्र, नागरिक पी0 जी0 कालेज जंघई, जौनपुर

मानव के पाषाणिक जीवन को तीन कालों - पुरापाषाणकाल, मध्यपाषाण काल एवं नवपाषाणकाल में विभाजित किया गया है। पुरापाषाणिक मानव यायावरी जीवन व्यतीत करता था और अपने जीविकोपार्जन हेतु पूर्णतः आखेट पर निर्भर था, इसलिए इस काल को 'आखेटक काल' कहा जाता है। मध्य पाषाण काल तक आते - आते वह एक स्थान पर बसना सीख गया था और अपनी आजीविका हेतु खाद्य सामग्री का संग्रह भी करने लगा था और अब आखेटक जीवन से "खाद्य संग्राहक" की अवस्था को प्राप्त हुआ। इसी काल में वह पशु - पालन एवं कुछ जंगली अनाजों का उत्पादन भी करने लगा था, किन्तु नवपाषाणकाल आदि मानव के जीवन में एक क्रान्ति के युग का प्रतिनिधित्व करता है जबकि मानव ने कृषि करना प्रारम्भ किया और अब वह स्वयं उत्पादक बन गया। कृषि एवं पशुपालन प्रथम बार मध्य पाषाणकाल में प्रारम्भ हुए जो आगे चलकर नवपाषाणिक मानव की आजीविका से स्थायी रूप से जुड़ गये।[1]

विन्ध्य क्षेत्र के मध्यपाषाणिक मानव की आजीविका के साक्ष्य इस क्षेत्र में स्थित पुरास्थलों के सर्वेक्षण एवं उत्खनन से प्राप्त हुए हैं। मोरहना पहाड़, बघहीखोर, लेखहिया, चोपनीमाण्डो, बाघोर II, कुनझुन II, मेढ़ौली तथा बाँकी के उत्खनन से विभिन्न जीव-जन्तुओं, वनस्पतियों, लघुपाषाणउपकरण, खाद्योत्पादक उपकरण तथा मृद्भाण्ड प्राप्त हुए हैं जिनके विष्लेषण से विन्ध्य क्षेत्र के मध्य पाषाणिक मानव की आजीविका के बारे में सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। इन साक्ष्यों से यह प्रमाणित होता है कि मानव जो अभी तक केवल आखेटक था और जिसका जीवन दिन - प्रतिदिन के आखेट पर निर्भर था, अब खाद्य संग्राहक होने लगा था। प्रारम्भ में उसने जंगली घासों के बीजों का संग्रह किया और बाद में पशुपालन ने उसके जीवन में स्थिरता प्रदान की जो मानव के विकास की ओर अग्रसर होने का प्रथम चरण था।[2]

प्रयाग विश्विद्यालय के प्रो0 वी0डी0 मिश्रा ने लेखहिया शिलाश्रय संख्या-1 के उत्खनन से हड्डी निर्मित प्वाइण्ट्स तथा जानवरों की हड्डियों के टुकड़े प्राप्त किये है जिन पर काटने के निशान विद्यमान हैं।[3] चोपनीमाण्डो के फेज III से गर्त चूल्हों में भी भारी मात्रा में हड्डियों के टुकड़े मिले हैं जो विन्ध्य क्षेत्र के मानव के जीवन में आखेट की भूमिका को रेखांकित करते हैं। सोनघाटी स्थित कुनझुन II से भी जानवरों की हड्डियाँ मिली हैं, जिनमें विषेष प्रकार के फ्रैक्चर हैं, उनसे यह विदित होता है कि उन्हें चीर फाड़कर उनसे मज्जा निकाल ली गयी है। इन हड्डियों के आधार पर हिरण तथा चौसिंगा की पहचान की गयी है। इस पुरास्थल पर मानव की आजीविका में इन जंगली पशुओं के शिकार की महत्वपूर्ण भूमिका थी।

विन्ध्य क्षेत्र के मध्य पाषाणिक स्थलों से भारी संख्या में लघु पाषाण उपकरण प्राप्त हुए हैं जिनका प्रयोग संयुक्त उपकरण बनाकर किया जाता था। शिकार हेतु प्रयुक्त होने वाले प्रमुख उपकरणों में धनुष - बाण, बरछे अथवा भाले और हसिया थे। लघुपाषाण उपकरणों की भारी संख्या में प्राप्ति इस क्षेत्र के मध्य पाषाणिक मानव के जीवन में आखेट की महत्वपूर्ण भूमिका को दर्शाता है।

मध्य पाषाणिक मानव निश्चित रूप से बाँस-बल्ली तथा खपच्चियों की सहायता से रहने के लिए गृह-आवासों का निर्माण करने लगा था।[4] इसके अलावा वे लोग निवास के लिए शिलाश्रयों का भी प्रयोग करते थे। शैल-चित्रों तथा उत्खनन में प्राप्त हड्डियों के परीक्षण से ज्ञात होता है कि वे लोग भैंसा, गैंडा, सुअर तथा विविध प्रकार के हिरनों का शिकार करते थे। शिकार में सामूहिक रूप से भाग लेने के कारण लोगो में सामाजिकता की भावना का विकास हुआ। शिकार के बाद सभी के बीच मांस का वितरण होता रहा होगा जिसे वे अपने आवास पर लाकर आग में भूनकर खाते थे।[5]

विन्ध्य क्षेत्र एक असमतल एवं विषम जलवायु वाला क्षेत्र हैं, जहाँ विविध प्रकार के फल - पुष्प से युक्त वनस्पतियाँ पायी जाती हैं। चूँकि शिकार करना एक खतरनाक कृत्य था, इसलिए इस क्षेत्र का मानव अपनी आजीविका के लिए इन वनस्पतियों की

ओर आकृष्ट हुआ। इस संदर्भ में विन्ध्य क्षेत्र के चोपनीमाण्डो नामक पुरास्थल का उल्लेख किया जा सकता है जहाँ मानव ने काफी पहले से ही स्थायी जीवन आरम्भ कर दिया था।

इस स्थल से प्राप्तअण्डाकार एवं गोलाकार झोपड़ियाँ, चूल्हें, स्टोरेज पिट, स्टोरेज विन्स तथा भारी मात्रा में प्राप्त प्रस्तर निर्मित रिंग - स्टोन, सिल - लोढ़े आदि यहाँ पर मानव के स्थायी निवास के सूचक हैं। इस स्थल से ही आखेटक - संग्राहक अर्थ - व्यवस्था से नवपाषाणिक उत्पादक अर्थव्यवस्था के विकास केअंकुर परिलक्षित होते हैं।

चोपनीमाण्डो के सम्पूर्ण सांस्कृतिक जमाव को तीन प्राकृतिक उपकालों में विभाजित किया गया है जिनमें से अन्तिम उपकाल को आद्य नवपाषाणकाल कहा जा सकता है। इस उपकाल में निवास के लिए बनाई झोपड़ियों के फर्श पर बिखरे हुए लघु पाषाण उपकरण पत्थर की निहाई, गदा शीर्ष, गोफन पत्थर, घर्षण पाषाण एवं सिल - लोढ़े तथा हस्त निर्मित भंगुर मृद्भाण्ड भी प्राप्त हुए हैं। इस सम्पूर्ण क्षेत्र में मध्य पाषाण युगीन स्तरों से मृद्भाण्ड परम्परा विकसित होती हुई नवपाषाणिक व्यवस्था के सम्पर्क का प्रतिफल हो सकती है।[6]

मानव के स्थायी निवास के पश्चात उसके विकास का दूसरा चरण पशुपालन का आरम्भ माना जाता है। परन्तु इस काल में पशुपालन का आरम्भ हो गया था, अथवा नहीं, यह कहना कठिन है। पशुपालन के प्रमाण केवल आदमगढ़ शैलाश्रय के उत्खनन से प्राप्त होते हैं। विन्ध्य क्षेत्र के किसी भी मध्य पाषाणिक पुरास्थल से पशुपालन के स्पष्ट प्रमाण नही मिलते। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि सम्भवतः इस दिशा में कुछ विकास होने लगा था। विन्ध्य क्षेत्र के मध्यपाषाणिक स्थलों से प्राप्त मृद्भाण्डों के साक्ष्य यह सूचित करते है कि इस काल में मृद्भाण्डों का निर्माण होने लगा था, यद्यपि उद्योग के रूप में मृद्भाण्ड कला का विकास नवपाषाण काल में हुआ।[7]

विन्ध्य क्षेत्र का मध्यपाषाणिक मानव आखेटक से खाद्य संग्राहक जीवन की ओर उन्मुख हुआ। इस संदर्भ में स्पष्ट प्रमाण चोपनीमाण्डो के फेज III से प्राप्त पकी मिट्टी के टुकड़ों में लगे हुए चावल की भूसी/दाने विषेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनकी पहचान जंगली धान (ओराइजा निवारा, ओराइजा रफिगोना) से की गयी है। इन साक्ष्यों से चोपनीमाण्डो के मध्यपाषाणिक मानव की अर्थव्यवस्था अधिक सुरक्षित तथा विकसित दिखायी पड़ती है।

मध्य प्रदेश के रायसेन जिले में स्थित भीमबैठका के शिलाश्रयों से प्राप्त चित्र, मध्यपाषाणिक मानव की आजीविका की ओर संकेत करते हैं । इन शिलाचित्रों में उन पशुओं के चित्र हैं जिनका शिकार किया जाता था। इसके साथ ही इन शैल चित्रों में मानव के दैनिक जीवन से सम्बन्धित झांकी भी प्रदर्शित की गयी है। इन चित्रों में आखेट के विविध दृश्य, मधु संग्रह तथा नृत्य के दृश्य भी परिलक्षित होते हैं। इनका सूक्ष्म विष्लेषण मध्य पाषाणिक मानव की आखेट और खाद्य - संग्राहक अर्थव्यवस्था को प्रमाणित करता है।

मध्य पाषाणिक उपकरणों के माइक्रोबीयर एनालिसिस से ज्ञात होता है कि उनका प्रयोग खुरचने, चीरने, काटने, छिद्र करने तथा खाँचा बनाने में किया जाता था।[8] इन उपकरणों की एनालिसिस से उन पदार्थो की भी जानकारी मिलती है, जिन पर उनका प्रयोग किया जाता था। इन अध्ययनों से विन्ध्य क्षेत्र के मध्य पाषाणिक मानव की आजीविका, शिकार तथा वन्य खाद्यान्न के संग्रह पर आधारित दिखायी पड़ती है जैसा कि पुरातात्विक अवशेषों तथा जैव पुरातात्विक अध्ययन से स्पष्ट होता है।[9]

विन्ध्य क्षेत्र की जनजातियाँ आज भी विविध प्रकार के वानस्पतिक उत्पादों से अपना जीविकोपार्जन करती हैं। ये आज भी 67 जंगली वनस्पतियों का उपयोग करती हैं। इनमें 8 पत्तियाँ, 7 फूल, 30 फल, 4 बीज, 18 कंद, अंकुर एवं जड़ सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र में शायद ही किसी माह में जंगली संसाधन दोहन हेतु उपलब्ध न होते हों। मानसून के समय 19 प्रजातियाँ, 3 पत्ते, एक फूल, 8 फल तथा सात कंद प्राप्त होते हैं।[10] जाड़े में 22 प्रजातियाँ, एक पत्ता, एक फूल, 13 फल, तथा 7 कंद प्राप्य हैं एवं ग्रीष्म में 23 प्रजातियाँ, दो पत्ते, 4 फूल, 11 फल, 2 बीज, 3 कंद एवं एक गोंद प्राप्त होता है।[11]

उत्तर - पूर्व विन्ध्य क्षेत्र में वर्षा ऋतु में बड़ी संख्या में जंगली पत्तियाँ, फूल, फल, कंद आज भी प्राप्त होते हैं तथा स्थानीय लोग कच्चे तथा पकाकर इनका सेवन करते हैं। इनमें चौराई की पत्ती, चकौड़, बड़ा साग, भुंजी, चेंच, कनकौआ, लहसुआ एवं वनकारी आदि के फूल तथा पत्तियाँ, पंडोरा के फल, सतावर कंद, जंगली सुरक्षित मुसाली, सेमलकंद, विस्मतिया, अमलोहर

कंद, कामराज, केसर, गोंद (नागार गोथा) आदि सम्मिलित हैं। छिउल पौधों की कोमल जड़ों एवं खजूर के ऊपरी छिलको का भी सेवन अवसर पड़ने पर वर्षाऋतु में किया जाता है।

इस क्षेत्र में शरद ऋतु में प्राप्य मुख्य जंगली फलों में आंवला, इमली, सीताफल, मकोई तथा सैंधा अथवा सेंधिया प्रमुख है। नवम्बर - दिसम्बर में बथुआ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। जाड़े में झरबेर कुछ हद तक सहायक खाद्य - सामग्री का कार्य करता है।झरबेर घनी कांटेदार झाड़ियों की रचना करते हैं। पके फलों को तुरन्त तोड़कर तथा उन्हें सुखाकर एवं सुरक्षित कर ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतु में खाने हेतु प्रयोग किया जाता रहा होगा। चूँकि मध्य पाषाणिक मानव आखेटक से संग्राहक जीवन की ओर बढ़ रहा था, इसलिए उसके द्वारा प्रतिकूल मौसम में खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से ऐसे कार्य किये जाते रहे होंगे।

वर्तमान समय में विन्ध्य क्षेत्र में पायी जाने वाली वनस्पतियों के आधार पर भी इस क्षेत्र के मध्य पाषाणिक मानव की आजीविका के सम्बन्ध में सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

ग्रीष्म ऋतु में महुआ के फूल, तेंदू, बेल, कठजामुन, गुलर, पीपर, बरगद, खजूर आदि पाये जाते हैं। महुआ का फूल इनमें सर्वाधिक उपयोगी है। ये फूल कच्चे अथवा पकाकर खाये जाते हैं। इन फूलो को सुखाकर तथा उन्हें पीटकर अन्दर की भूसी निकालकर सुरक्षित संग्रह किया जाता है। दाल एवं चने के साथ भी इसे पकाकर खाया जाता है। इनके फलों से तेल निकालकर उसका उपयोग किया जाता है।[12]

इस प्रकार हम देखते है कि विन्ध्य क्षेत्र का मध्य पाषाणिक मानव धीरे - धीरे आखेटक जीवन का त्यागकर क्षेत्र में पायी जाने वाली वनस्पतियों का प्रयोग करके खाद्यसंग्राहक एवं खाद्यउत्पादक जीवन की ओर प्रव्रजित हुआ।

सन्दर्भ

[1]. थामस, पी0के0, पी0पी0 जोगलेकर, वी 0डी0 मिश्रा, जे0एन0 पाण्डेय एण्ड जे0 एन0 पाल, 1995, ए प्रीलिमिनरी रिपोर्ट आफ द फाइनल रिमेन्स फ्राम द दमदमा, पेज 29 - 36।
[2]. वर्मा, आर0के0, 2016, भारत की प्रस्तर युगीन संस्कृतियाँ, पृ0 276, परमज्योति प्रकाशन, प्रयागराज
[3]. लुकास,जे0आर0 और वी0डी0 मिश्रा, 1997, द पीपुल आफ लेखहिया: ए बायोआर्कियोलाजिकल एनालिसिस आफ लेट मेसोलिथिक हण्टर फोंरजर्स आफ नार्थ इण्डिया, पृ. 873-889,न्यू देहली
[4]. वर्मा,आर.के .पूर्वोक्त, पृ. 277
[5]. वही,पृ.278
[6]. पाण्डेय, वी0के0, पुरातत्व मीमांसा, पृ0 241, शारदा पुस्तक भवन प्रयागराज।
[7]. पाल, जे0 एन01996 - 97, माइक्रोवीयर स्टडीज आफ माइक्रोलिथ्स आफ द मेसोलिथिक नार्थ इण्डिया, प्रीमिलिनरी रिपोर्ट आन मेथड्स एण्ड रिजल्ट्स, प्राग्धारा 7, पृ0 1 - 9।
[8]. वही, पृ0 1 - 9।
[9]. थामस, पी0के0, पी0पी0 जोगलेकर, बी0डी0 मिश्रा, जे0एन0 पाण्डेय एण्ड जे0 एन0 पाल, 1996, फाइनल रिमेन्स फार द मेसोलिथिक फूड इकोनामी आफ द गंगेटिक पृ0 255 -256
[10]. डा0 पाण्डेय, बी0के0, पूर्वोक्त पृ0 285।
[11]. वही, पृ0 286।
[12]. वर्मा, आर0के0, 1981 - 83, द मेसोलिथिक कल्चर्स आफ इण्डिया, पृ0 27-28।